नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा में भारतीय दर्शन
और
तद्वाहिका संस्कृत भाषा का महत्व

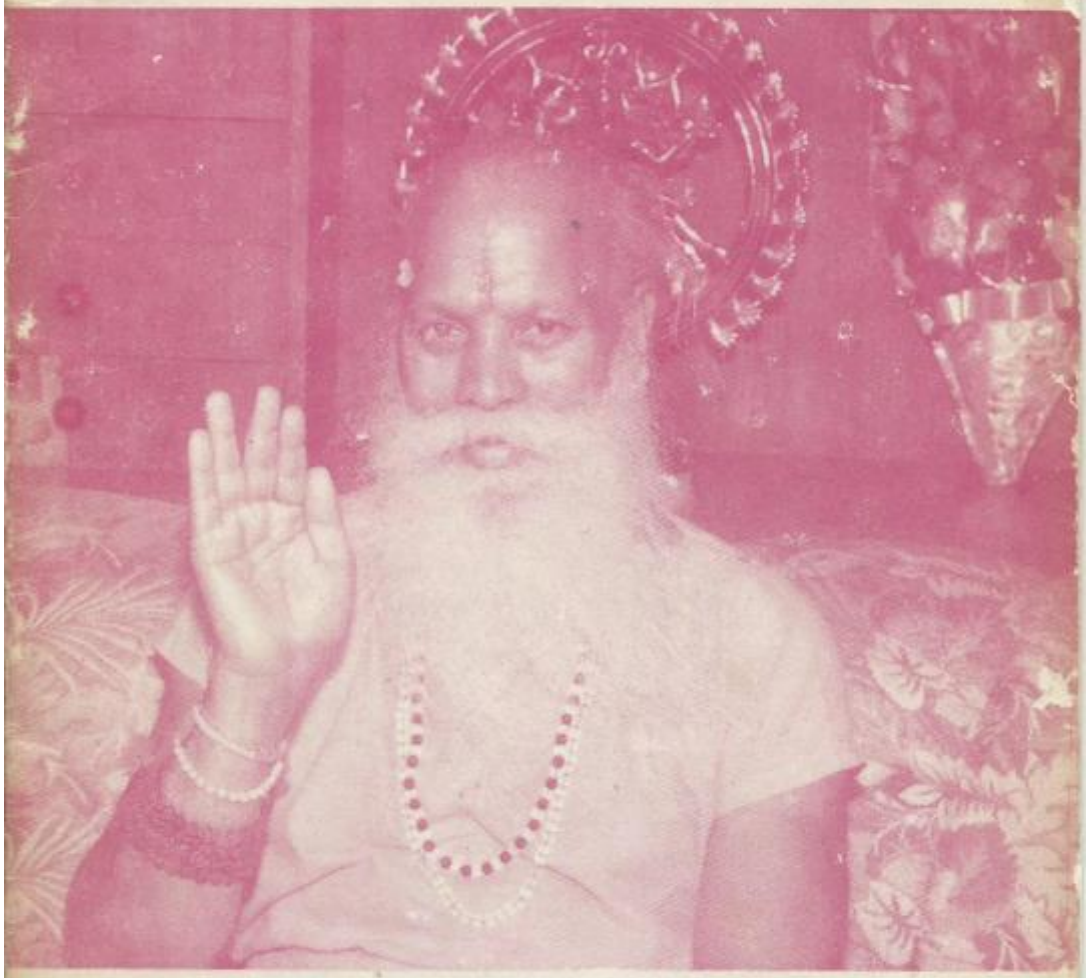

ब्रह्मर्षि विश्वात्मा बावरा जी महाराज

नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा में भारतीय दर्शन और तद्वाहिका संस्कृत भाषा का महत्व

व्याख्याता

ब्रह्मर्षि विश्वात्मा बावरा जी महाराज

ब्रह्मर्षि आश्रम, विराट नगर, पिंजौर (हरियाणा) फोन 01733-65170

स्थान

फिक्की सभागार, तानसेन मार्ग, नई दिल्ली

दिनांक

18 जनवरी 1997, पौष शुक्ल 10, शनिवार

आयोजक

दिल्ली संस्कृत अकादमी

नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा में भारतीय दर्शन और तद्-वाहिका संस्कृत भाषा का महत्व

परावर रूप में उपस्थित मेरी प्रिय आत्माओं!

करुणानिधान भगवान् की करुणा आप सभी के लिए सदैव कल्याण का सृजन करती रहे, यह मेरी आन्तरिक शुभ कामना। ईश्वरीय विधान से प्रेरित होकर हम आप सभी आज इस स्थान पर एकत्रित हुए हैं। प्रयोजन है मानवीय जीवन विकास के लिए नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा में भारतीय दर्शन और तद्–वाहिका संस्कृत भाषा का महत्त्व।

आप सभी जानते हैं कि मनुष्य एक बुद्धि प्रधान प्राणी है। मनुष्य जीवन की विशिष्टता में मूल हेतू उसका बुद्धियुक्त होना है। बुद्धि के प्रकाश में अपने जीवन विकास की व्यवस्था को स्वीकार करते हुए यदि मानव प्रयत्नशील होता है तो वह अपने जीवन के प्रयोजन को पूर्ण करने में सक्षम हो सकता है। बुद्धि के परिमार्जन के लिए दर्शन एक सर्वश्रेष्ठ साधन है। भारतीय दर्शन में बुद्धि के परिमार्जन की व्यवस्था है। इसी के प्रकाश में प्राचीन काल से लेकर अब तक भारतीय मनीषा ने जीवन के यथार्थ स्वरूप को समझते, जानते और अनुभव करते हुए अपने लिए ही नहीं अपितु विश्व मानव के लिए एक प्रकाश स्तम्भ स्थापित किया है। जब स्मृतिकार मनु यह घोषणा करते हैं–

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरूपृथिव्यां सर्वमानवाः।।
(मनु स्मृति 2/20)

इस पवित्र देश में उत्पन्न हुए अग्रजन्मा प्रत्यक्षधर्मा महर्षियों के सान्निध्य में बैठकर पृथ्वी के समस्त मानव अपने–अपने सद्चरित्र की शिक्षा प्राप्त करें, तो वे केवल काल्पनिक बात नहीं करते, एक यथार्थ सत्य की घोषणा करते हैं। शताब्दियों, सहस्त्राब्दियों तक नहीं युगों तक इस देश के महर्षिगण विश्व को समुचित जीवन जीने की दिशा प्रदान करते रहे हैं। दुर्भाग्य से जब से इसने अपनी संस्कृति, सभ्यता, दर्शन और विज्ञान की वाहिका संस्कृत भाषा का त्याग किया है वा उसकी उपेक्षा की है, इतिहास साक्षी है कि तभी से इस महान् राष्ट्र के पतन का क्रम प्रारम्भ हुआ है। मेरा ऐसा विश्वास है कि जब तक इस देश की आने वाली सन्तति के लिए दिव्य भावों की वाहिका देव वाणी के लिए अध्ययन और अध्यापन का क्रम नहीं चलेगा तब तक वह अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा को पुनः प्राप्त करने में सक्षम नहीं हो सकेगा।

आप लोग जानते हैं कि भाषा अन्तर भाव की वाहिका होती है। भाषा शब्द का अर्थ ही यह होता है जो अन्तर में छिपे हुए भावों को प्रकाशित करे। मानवीय जीवन के सम्पूर्ण पहलुओं को स्पर्श करते हुए उसके केवल स्थूल वा सूक्ष्म ही नहीं कारण शरीर गत भावनाओं को अभिव्यक्त करने की क्षमता यदि किसी भाषा में है तो वह केवल एक संस्कृत भाषा है जिसके माध्यम से हमारे अतीत के महर्षियों एवं तत्त्ववेत्ताओं ने समाधि प्रज्ञा को प्राप्त कर ज्ञान–विज्ञान के कोष का संकल्न किया और विश्व मानव को प्रदान किया। आप लोग जानते हैं कि विश्व के पुस्तकालयों मे वेद से प्राचीन ग्रंथ अब तक कोई दूसरा उपलब्ध नहीं हुआ है। यह भी आप लोग जानते होंगे कि विश्व के जितने प्राचीन देश रहे हैं उनमें संस्कृति, सभ्यता और धर्म की प्रतिष्ठा का श्रेय इस परम पूनीत भारत देश को ही रहा है। इतिहास साक्षी है कि विश्व के मनुष्यों को सभ्यता की सीख देने का श्रेय वैदिक धर्म को ही रहा है चाहे वह कोई भी देश रहा हो वा किसी भी भाषा में वहाँ के महापुरुषों ने धर्म की प्रतिष्ठा की हो। धर्म ही मनुष्यता के सृजन का मूलाधार है। धर्म के यथार्थ स्वरूप का अवबोधन जिस भाषा में विश्वमानव को प्रदान किया गया वह भाषा संस्कृत भाषा रही है। आज भी जब हम हिन्दू लेटिन और ग्रीक भाषाओं का अध्ययन, चिन्तन और मनन करते हैं तो उसके मूल में हमें संस्कृत भाषा के ही दर्शन होते हैं। विश्व में जहां भी कहीं संस्कृति का संस्कार मिला है उसकी जन्मदात्री यह संस्कृत भाषा ही रही है।

कई वर्ष पूर्व की बात है मैं ऐतिहासिक अनुसंधान के लिए ब्रिटिश म्यूज़ियम में पुराने अवशेषों का निरीक्षण कर रहा था। करते–करते मैं उस कक्ष में पहुँचा जिसमें सुमेरियन संस्कृति का अवशेष रखा हुआ था। मेरे कुछ अंग्रेज़ शिष्य मेरे साथ थे, वो मेरे से पूछने लगे कि यह सुमेरियन संस्कृति हमारी पाश्चात्य संस्कृति की मूल कही जाती है, आपकी इस विषय में क्या राय है? मैंने उनसे कहा कि श्रीमान्! सुमेरियन शब्द स्वयं में संस्कृत का शब्द है, जो कुछ भी अवशेष यहाँ उपलब्ध हुए हैं वे हमारी संस्कृति के ही भाग हैं। इसमें कोई ऐसी वस्तु नहीं जो हमारे लिए नवीन हो। एक और आश्चर्य की बात बताऊँ, वहाँ अवशेषों में एक देवी की मूर्ति थी जो गर्दभ पर सवार थी। मेरे से एक अंग्रेज़ ने पूछा कि हमने आपके यहाँ शेर पर सवार तो देवी देखी है लेकिन गर्दभ पर सवार कोई देवी नहीं देखी। क्या यह भी आपकी संस्कृति का ही चिन्ह है? मैंने कहा–जी, हाँ। हमारे यहाँ एक शीतला देवी है। भारत के लोग शीतला देवी की भी उपासना करते हैं। शीतला देवी का वाहन गर्दभ है। यह उसी का अवशेष है। उस देवी के नीचे चेचक से पीड़ित एक व्यक्ति लेटा हुआ था। मैंने कहा कि आज भी भारत में चेचक की बीमारी होती है तो लोग शीतला देवी की ही आराधना करते हैं। मेरे कहने का अभिप्राय कि विश्व को संस्कारित जीवन जीने की दिशा प्रदान करने वाली पवित्र भूमि यह भारत भूमि रही है।

एक बात याद रखें कि जिस राष्ट्र में योग्यता के अभाव में अधिकार प्राप्त करने की प्रतिष्ठा हो जाए उस देश के पतन में अधिक विलम्ब नहीं होता। हमारे इस देश

के पतन में यही कारण रहा है। एक बात और भी सुन लीजिए। इस समय वैज्ञानिकों ने सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया है कि संस्कृत से श्रेष्ठतम और कोई भाषा विश्व में नहीं है। आप लोगों ने यह भी पढ़ा होगा कि वर्तमान की श्रेष्ठतम उपलब्धि कम्प्यूटर यन्त्र के लिए संस्कृत भाषा को ही सर्वश्रेष्ठ माध्यम माना गया है। लेकिन हमारे ज्ञान विज्ञान की वाहिका, धर्म की प्रकाशिका, संस्कृति और सभ्यता की वाहिका संस्कृत भाषा कुछ शताब्दियों से एक वर्ग विशेष में ही सीमित होकर रह गई। आज जब हम लोगों से कहते हैं कि संस्कृत अवश्य पढ़नी चाहिए तो वो कहते हैं कि क्या हमें पुरोहिताई करनी है? कहने का अभिप्राय यह कि संस्कृत भाषा आज केवल पुरोहितों की भाषा बन कर रह गई है। उसको इस अवस्था में पहुंचाने का श्रेय भी हम ही लोगों को है। हमारे यहाँ कुछ ऐसे महापुरुष हुए हैं जो हमारे लिए वन्दनीय हैं लेकिन उन महापुरुषों की कृपाप्रसाद का परिणाम यह रहा कि भारत का एक बहुत बड़ा वर्ग विद्या से वंचित रह गया। पहले तो यह घोषणा कर दी कि स्त्रियों के लिए विद्या अध्ययन का अधिकार ही नहीं है। शेष जो पुरुष वर्ग रह गया उनके भी चार भाग कर दिए। चार भाग में से तीन भाग को संस्कृत भाषा के अध्ययन का अधिकार तो था लेकिन कुछ काल पूर्व उनमें से भी दो को अयोग्य घोषित कर दिया गया। एक भाग जो रह गया यानी पुरोहित वर्ग उनके लिए ही संस्कृत भाषा उपयोगी वा ग्राह्य समझी गई। परिणाम यह हुआ कि हमारे सारे शास्त्र जैसे समाज-शास्त्र, नीतिशास्त्र, धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र, इतिहास तथा गणित-शास्त्र तक ज्ञान-विज्ञान का स्त्रोत जो कुछ भी रहा है, उन सभी से आधा तो स्त्री समाज पहले ही वंचित कर दिया गया था, शेष आधे का भी तीन चौथाई मानव समाज वंचित हो गया क्योंकि ये सभी ज्ञान-विज्ञान के कोष संस्कृत भाषा में ही निहित थे। जब भाषा से ही मानव समाज वंचित कर दिया जाए तो उसमें भला इस प्रकार के विषयों का ज्ञान कहाँ से उपलब्ध होगा?

क्या आप लोग नहीं जानते कि यह वो देश रहा है जहाँ तक्षशिला, नालन्दा और विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालय रहे हैं जिनके विषय मे चाईनीज़ यात्री हयूनसांग कहता है कि नालन्दा विश्वविद्यालय में जो कम से कम पठित व्यक्ति था वह दस विषयों का आचार्य था। उसने अपने संस्मरण में यह भी लिखा है कि नालन्दा विश्वविद्यालय में प्रवेश प्राप्त करने के लिए प्रथम साक्षात्कार (इंटरव्यू) वहाँ का द्वारपाल लेता था। उस समय ज्ञान–विज्ञान का प्रकाश कितना रहा होगा जिस समय वह यात्री हयूनसांग भारत में आया था। वह कहता है कि भारत एक ऐसा देश है जहाँ पर मैं सात वर्ष रहा हूँ लेकिन मैंने कोई भिखारी नहीं देखा। उस देश के लोग अपने घरों मे ताला नहीं लगाते क्योंकि वहाँ चोरी का भय नहीं है। उस देश के लोग किसी दूसरे को अपना दास भी नहीं बनाते। वो यह भी कहता है कि भारत को 'इन्दुस्थान' कहते हैं। इन्दु का अर्थ होता है चन्द्रमा। जैसे चन्द्रमा अपनी किरणों से सारे विश्व के शीतलता प्रदान करता है इसी प्रकार से इन्दुस्थान विश्व के मानवों को अपने ज्ञान–विज्ञान द्वारा शान्ति और सुख प्रदान

करने में सक्षम है। आप उस देश के निवासी हैं जिस देश के एक सम्राट ने ऋषियों के सामने प्रतिज्ञा की–

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपो
नाना हिताग्निर्ना विद्वान्न स्वैरी स्वैरिणी कुतः।
(छान्दोग्य. 5/11/5)

"ऋषियो! मेरे देश में कोई चोर नहीं है; कोई कृपण नहीं है; कोई दरिद्री नहीं है; कोई मद्यपायी नहीं है; कोई अयाज्ञिक वा कर्त्तव्य से च्युत नहीं है; कोई अविद्वान् वा अज्ञानी नहीं है और मेरे देश में जब कोई व्यभिचारी पुरुष ही नहीं है तो व्यभिचारिणी स्त्रियां कहाँ होंगी?"

यह कैकई नरेश अश्वपति की घोषणा इस देश के अतीत के आदर्श को प्रस्तुत करती हैं। आज यह सारी बातें हमारे प्राचीनतम ग्रन्थों के पन्नों में ही पड़ी रह गईं। जिस देश ने महान् संस्कृति, महान् सभ्यता, महान् धर्म और श्रेष्ठतम मानव समाज का सृजन किया हो उस देश के लोग अब यह कहने लगे हैं कि हमें उस धर्म की आवश्यकता नहीं है तो इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता है? कोटि–कोटि जनता जिस धर्म के अनुशासन में रहते हुए सुख और शान्ति का जीवन जीती रही है आज हमारे देश के नव–निर्माता नेता कहते हैं कि हमें अब उस धर्म की आवश्यकता ही नहीं है। हम तो धर्म निरपेक्ष होकर के एक नए समाज की रचना करेंगे। कुछ लोग यह कहते हैं कि यह देश कभी एक राष्ट्र रहा ही नहीं और न तो यहाँ कोई एक संस्कृति, भाषा और धर्म ही रहा है। बड़े आश्चर्य की बात है ! उनकी इन बातों को सुन कर ऐसे लगता है कि पता नहीं वो किस विश्वविद्यालय से पढ़ कर आये हैं। एक सज्जन से मैंने पूछा कि जब आप कहते हो कि लोग आते गये और हिन्दुस्तान बनता गया तो उससे पूर्व कोई हिन्दुस्तान था कि नहीं था? यहाँ की कोई संस्कृति थी कि नहीं थी? शक आए, हून आए, कुशान और तातार आए लेकिन वो सब कहाँ और किसमें विलीन हो गए? उस समय यहाँ कोई हिन्दू समाज था जिसमें वो विलीन हुए या सब ने मिलकर कहा कि हम हिन्दू होकर रहेंगे अर्थात् एक नई हिन्दू जाति का उन्होंने आविर्भाव किया। क्या आपको यह पता नहीं है कि यहाँ एक महासागर के समान वैदिक संस्कृति, सभ्यता वा धर्म था जिसमें वे सब छोटे–छोटे नालों के समान आकर विलीन हो गये और अपना अस्तित्व खो दिया। वह महासागर सनातन–धर्म के रूप में आज भी सुरक्षित है।

याद रखो आज बैबेलोनिया, मैसोपोटामिया, चार्डिया, सुमेरिया, रोम तथा यूनान नहीं हैं। इनके केवल अवशेष ही रह गए हैं किन्तु लाखों वर्षों का पुराना भारत आज भी ज्यों का त्यों आप देख सकते हो। इसमें कारण क्या रहा है जानते हो? मैंने उन देशों की संस्कृतियों का अध्ययन किया है, उनमें वैदिक विज्ञान जैसा कोई जीवनोपयोगी तत्त्व नहीं था। भारत ही एक ऐसा देश है जिसमें वैदिक विज्ञान का प्रकाश हुआ है। हमारे यहाँ ऋषियों ने कहा कि विशुद्ध बुद्धि के प्रकाश में ही धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य

की प्रतिष्ठा होती है इसलिए यहाँ बुद्धि को विशुद्ध बनाने की प्रक्रिया अपनायी गई है। उस प्रक्रिया का नाम है योग जिसके द्वारा श्रुत और अनुमित बुद्धि से परे ऋतम्भरा प्रज्ञा की प्राप्ति की जाती रही है। वह ऋतम्भरा प्रज्ञा कैसे प्राप्त होती है इस सम्बन्ध में महर्षि पतंजलि कहते हैं–

निर्विचारवैशारद्येऽध्यात्मप्रसादः।
ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा।
(यो० सू० 2/47,48)

अन्तर्मुखी हो ध्यान की गम्भीर अवस्था में योगी जब निर्विचार स्थिति को प्राप्त करता है और उसे अभ्यास द्वारा दृढ़ और स्थाई कर लेता है उस अवस्था में उसे चित्त को प्रकाशित करने वाले प्रत्यक् चैतन्य का प्रकाश वा प्रसाद प्राप्त होता है। उस प्रत्यक् चैतन्य के प्रकाश से प्रकाशित प्रज्ञा को ही ऋतम्भरा प्रज्ञा कहते हैं। योगी उस ऋतम्भरा प्रज्ञा को प्राप्त कर इस सृष्टि के सम्पूर्ण कार्य–कारण सम्बन्ध को प्रत्यक्ष देखता है।

इतना ही नहीं और भी एक रहस्य की बात समझाने जा रहा हूँ। हम आस्थावान् व्यक्ति वेद को अपौरुषय मानते हैं। कुछ लोगों ने कहा कि वेद ईश्वर प्रदत्त ज्ञान है। ईश्वर कहाँ है जो ज्ञान देता है? कहा कि ईश्वर तो सर्वव्यापी है। सर्वव्यापी ईश्वर ने केवल भारत को ही यह ज्ञान क्यों दिया दूसरे देशवासियों को क्यों नहीं दिया? क्या उस ईश्वर में भी किसी प्रकार का पक्षपात है? इसका कोई उत्तर नहीं। मेरे विचार से वेद अपौरुषय ज्ञान है, इसमें कोई संदेह नहीं लेकिन इसका अभिप्राय यह नहीं है कि सातवें आसमान में कोई ईश्वर बैठा हुआ है जो वेद की ऋचाओं को लिख–लिख कर देता है और लोग उसे प्राप्त कर ज्ञान वृद्धि करते रहे हों। इसका रहस्य यह है कि साधना के क्रम में योगी जब एक विशिष्ट स्थिति में पहुँचता है तब उसे ऋतम्भरा प्रज्ञा प्राप्त होती है। ऋतम्भरा प्रज्ञा के प्रकाश में वह प्रकृति के समग्र रहस्यों को जानता, देखता और अनुभव करता है किन्तु तब तक उसका अहं बना रहता है। जब तक उस साधक का अहं बना रहता है उस अवस्था तक जो कुछ भी वह ज्ञान प्राप्त करता है उसे अनुभूत ज्ञान कहते हैं। उसी साधना के क्रम में एक और स्थिति आती है जिस स्थिति में उसका व्यष्टि भाव अपने कारण में लीन हो जाता है। उस अवस्था को असम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। सम्प्रज्ञात समाधि की स्थिति में प्राप्त ज्ञान अनुभूत ज्ञान कहा जाता है और असम्प्रज्ञात समाधि की स्थिति में जिस ज्ञान का प्रकाश होता है वह अनुभूत ज्ञान नहीं होता क्योंकि समाधि की उस स्थिति में अनुभव कर्त्ता ही नहीं रहता। जिस अवस्था में अनुभव करने वाला ही नहीं है उस अवस्था में प्रकाशित ज्ञान को हम अनुभूत ज्ञान नहीं कह सकते वह पुरुषार्थ-जन्य ज्ञान भी नहीं होता, वह तो अवतरित ज्ञान होता है। उसे अपौरुषेय ज्ञान कहते हैं। उसी अपौरुषेय ज्ञान को हमारे यहाँ श्रुति कहते हैं।

उस अपौरुषेय ज्ञान को आविर्भूत करने वाले तत्त्वद्रष्टा महर्षियों को हम आप्तपुरुष कहते हैं।

'आप्त वाक्यं श्रुतिः' ऐसा कहकर हमारे पूर्वाचार्यों ने हमें संदेश दिया है। जो आप्त पुरुष हैं उनकी उच्चतम अवस्था में अवतरित हुए ज्ञान को ही दूसरी भाषा में Revealed Knowledge कहते हैं क्योंकि उस अवस्था में उसका व्यष्टि भाव नहीं रहता, वह अपने कारण में लीन हो जाता है। यहाँ एक प्रश्न होता है कि जब उनका व्यष्टि भाव अपने कारण में लीन होता है तो वे पुनः लौटते कैसे हैं और जीवित कैसे रहते हैं। इसमें आश्चर्य करने की क्या बात है? आपका व्यष्टि भाव नित्य–प्रति अपने कारण में लीन होता है। घोर सुषुप्ति अवस्था में आप जाते हैं कि नहीं? जाते हैं। घोर सुषुप्ति अवस्था में आपको अपना बोध होता है? नहीं होता। उस अवस्था में आपका अहं कहाँ होता है? घोर सुषुप्ति अवस्था में आपका अहं कारण में लय होता है। कारण में लय होने के नाते उस अवस्था को हमारे यहाँ दार्शनिक भाषा में प्राज्ञ कहते हैं। जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति, ये तीन अवस्थायें हैं और इनके तीन मुख्य आधार हैं जिन्हें विश्व, तैजस और प्राज्ञ कहते हैं। मेरा कहने का अभिप्राय कि जैसे घोर सुषुप्ति अवस्था में आपका व्यष्टि भाव जीवित नहीं रहता किन्तु होता है वह। कहाँ रहता है? अपने कारण में अवस्थित रहता है। यदि कारण में अवस्थित न रहे तो आप जागृत अवस्था में आ ही नहीं सकते। जागृत अवस्था में आने में कारण बनता है प्रारब्ध। इसी रूप से समाधि की उच्चतम अवस्था में पहुँचे हुए योगी में जिस दिव्य ज्ञान का आविर्भाव होता है उस ज्ञान को हमारे यहाँ श्रुति कहते हैं और वही वैदिक विज्ञान है। वर्तमान का वैज्ञानिक साधना के जिस स्तर पर अभी गया है वह वैदिक विज्ञान की केवल छाया मात्र को स्पर्श कर पाया है। मुझे विश्वास है कि जिस गति से वे लोग चल रहे हैं एक दिन उस ज्ञान को अवश्य अनुभव करेंगे। मैं लगभग पच्चीस वर्षों से इंग्लैंड और अमेरिका के देशों में रह रहा हूँ और वहाँ के वैज्ञानिकों से मेरा सम्पर्क है। भारतीय तत्त्व विज्ञान को मैं उनमें प्रचारित वा प्रसारित कर रहा हूँ। मुझे विश्वास है कि उनकी साधना का जो क्रम है धीरे–धीरे एक दिन आयेगा जब वे रास्ते पर आगे बढ़ेंगे।

पहले वहाँ पर भौतिक ऊर्जा की ही स्वीकृति थी। अब उन्होंने निश्चय किया है कि भौतिक ऊर्जा से भिन्न भी कोई शक्ति है वो है चेतना शक्ति। चेतना शक्ति के द्वारा ही जीवन का संचालन होता है। भौतिक ऊर्जा को नियंत्रित करने वाली चेतना शक्ति है। मैं उन लोगों से बताता हूँ कि अभी तो आप लोग उस चैतन्य की छाया को ही स्पर्श कर पाए हैं। चेतना शक्ति का मूल स्रोत प्रकाश नहीं अपितु उसकी छाया है। उपनिषदें कहती हैं–

छाया तपौ ब्रह्म विदो वदन्ति। (कठ० 1/3/1)

अभिप्राय यह कि जीवनी शक्ति और ब्रह्म का सम्बन्ध छाया और आतप के समान है। वहाँ पर यह संकेत किया गया है कि छाया को ही जीवात्मा कहते हैं। उस छाया का मूलाधार परम प्रकाशक परमात्म तत्त्व है। जब उस प्रकाशक का अनुभव करोगे तब आपको पता चलेगा कि वैदिक विज्ञान किस तत्त्व का अवबोधन करा रहा है और कहाँ

पहुंचाना चाहता है। मेरे कहने का अभिप्राय कि हमारी जीवन व्यवस्था को संचालित करने वाली वो संस्कृति है जो उस वैदिक विज्ञान पर प्रतिष्ठित है। आप लोग जानते हैं–'संस्कारात् जायते इति संस्कृति।' संस्कृति बाहर से खरीदी नहीं जाती। कभी–कभी मैं समाचार पत्रों में पढ़ता हूँ कि इस देश का दूसरे देश के साथ सांस्कृतिक समझौता हुआ है। आश्चर्य होता है कि इस शब्द का प्रयोग करने वाले को संस्कृति शब्द का ज्ञान है वा नहीं? समझौते से आयात करने पर कहीं से संस्कृति आती है या कहीं संस्कृति भेजी जाती है? हम लोग वर्षों से यूरोप और अमेरिका के देशों में काम कर रहे हैं। हज़ारों नहीं लाखों लोगों को संस्कारित किया है। जिनके बाप दादे गऊ मांस खाते थे और मदिरा पीते थे आज उनकी सन्तानें शुद्ध शाकाहारी जीवन बिता रही हैं। अमेरिका में मेरे कुछ ऐसे शिष्य हैं जिनके घरों में आप जायेंगे तो आप विश्वास नहीं करेंगे कि आप प्राचीन काल के किसी ब्राह्मण के घर में आए हैं या वर्तमान के किसी अमेरिकन के घर में? इतना अन्तर आया है उनके जीवन में। ये संस्कार एक या दो दिन के नहीं होते और न समझौते से आदान प्रदान किए जाते हैं। ये साधना–जन्य हैं।

भारतीय संस्कृति का मूलाधार विशुद्ध बुद्धि है और विशुद्ध बुद्धि की प्राप्ति साधना से होती है। विशुद्ध बुद्धि तब तक प्राप्त नहीं हो सकती जब तक उसमें से रज और तम को नष्ट न किया जाए। भगवान् ने गीता में स्पष्ट शब्दों में कहा है–

उपैति शान्त रजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम्। (गीता 6/27)

जब तक रजोगुण और तमोगुण आपकी बुद्धि से अलग नहीं होता तब तक आप ब्रह्मभाव से भावित नहीं हो सकते। ब्रह्मभाव से भावित हुए बिना भारतीय संस्कृति के यथार्थ स्वरूप का बोध नहीं हो सकता। पाश्चात्य दर्शन का आरम्भ होता है आश्चर्य से और भारतीय दर्शन का प्रारम्भ होता है जिज्ञासा से। आश्चर्य और जिज्ञासा में बड़ा अन्तर है। हमारे यहाँ धर्म के सम्बन्ध में भी महाराज मनु ने यह घोषणा की है–

धर्म जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः। (मनुस्मृति 2/13)

धर्म की जिज्ञासा रखने वाले मनुष्यों के लिए भी श्रुति ही परम प्रमाण है स्मृति नहीं। स्मृति में व्यक्ति का व्यष्टि भाव जीवित रहता है इसलिए उसका ज्ञान इतना परिष्कृत नहीं होता जितना कि उसका परिष्कृत होता है जो अपने व्यष्टि भाव को अपने कारण से लय करके उस अवस्था के प्राप्त होता है। मैं आप लोगों से निवेदन कर रहा था कि भारतीय परम्परा, सभ्यता, धर्म और जीवन प्रणाली, ये सभी कुछ अध्यात्म विज्ञान की श्रेष्ठतम अवस्था को प्राप्त हुई ऋषि प्रज्ञा प्रसूत व्यवस्थायें हैं। दुर्भाग्य से Religion का अर्थ धर्म करने वाले या मज़हब का अर्थ धर्म करने वाले तथाकथित बुद्धिजीवी जिनको अपनी संस्कृत भाषा का भी ज्ञान नहीं, क्या जानें कि भारतीय धर्म, सभ्यता और संस्कृति का सही अर्थ क्या है? मज़हब का अर्थ धर्म नहीं है और Religion का अर्थ भी धर्म नहीं है। धर्म अनुसन्धान का परिणाम है।

यस्य तर्केणानुसंधत्ते स धर्म वेदनेतरः।। (मनुस्मृति 12/106)

जो तर्क, युक्ति, विवेक और बुद्धि के द्वारा अनुसन्धान करेगा वही धर्म के यथार्थ स्वरूप को जान सकता है दूसरा नहीं। क्या आप कह सकते हैं कि Religion तथा मज़हब में भी कहीं ज्ञान–विज्ञान के अनुसन्धान के लिए स्थान है? बिल्कुल नहीं। बाईबिल के प्रथम अध्याय में यह बात बताई गई है कि एडम और ईव के लिए गॉड ने उस आनन्द कानन के सारे फलों को खाने की स्वीकृति दी लेकिन उसमें एक वृक्ष के फल को खाने के लिए मना कर दिया। जानते हो उस वृक्ष का क्या नाम था? Tree of Knowledge अर्थात् ज्ञान का वृक्ष। कहा कि यदि इसका फल खाओगे तो मेरी आज्ञा का उलंघन करोगे। परिणाम क्या हुआ कि एक दिन एडम कहीं गया था इतने में एक सांप आया और ईव से कहा कि तुम सभी वृक्षों का फल खाते हो, इसका क्यों नहीं खाते? ईव ने कहा कि इसके लिए गॉड ने मना किया है। सांप ने कहा कि गॉड ने इसलिए मना किया है कि कहीं दूसरा गॉड न हो जाए। यदि तुम्हें विश्वास न हो तो खा कर देख लो। ईव ने जब उस वृक्ष के फल को खाया तो उसको ज्ञान हो गया। जब ज्ञान हुआ तो वह अनुभव करने लगी कि अभी तक हम अन्धकार में ही पड़े हुए थे। एडम जब आया तो उसको भी उस फल को खाने के लिए विवश किया। जब उसने फल खाया तो उसको भी ज्ञान हो गया। सायंकाल को खुदा उस बगीचे में सैर करने को आया। उसे देखते ही दोनों एडम और ईव झाड़ी के पीछे जाकर छिप गए। खुदा ने आवाज दी, एडम तुम कहाँ हो? उसने कहा – पिता जी! मैं यहाँ हूँ। खुदा ने कहा कि मेरे सामने आओ। एडम ने कहा कि मैं सामने नहीं आ सकता क्योंकि मैं नंगा हूँ। गॉड ने कहा कि तुम्हें कैसे पता चल गया कि तुम नंगे हो? इसका अभिप्राय कि जिस वृक्ष के फल को खाने के लिए मैंने मना किया था उसके फल को तूने खाया है। परिणाम यह हुआ कि ज्ञान वृक्ष का फल खाने पर खुदा ने एडम और ईव को स्वर्ग से पृथ्वी पर धकेल दिया। जहाँ पर वैदिक धर्म, वैदिक दर्शन और वैदिक विज्ञान आपको यह बताता है– ऋते ज्ञाना न मुक्ति। ज्ञान के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती। भगवान् कहते हैं–

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। (गीता 4/38)

ज्ञान के समान पवित्र करने वाला इस सृष्टि में दूसरा तत्त्व नहीं यहाँ पर बाईबिल आपको बताती है कि यदि आपने ज्ञान का मार्ग अपनाया तो खुदा आपसे नाराज़ होकर आपको दोज़क में डाल देगा। Because according to Bible and Kuran if you have faith on five objects then you can be religious person. These five are - faith in God, faith in son of God, faith in holy ghost, faith in judgement day and faith in holy Bible. There are some differences between Bible and Kuran and these differences are only about messanger and his message. मैं आप लोगों को बता रहा था कि Religion और मज़हब, ये दोनों विवेक रहित विश्वास पर अवस्थित हैं। गॉड और उसका पुत्र जेसस

क्राईस्ट तथा इन दोनों क मध्य में Holy ghost जिसे पवित्रात्मा कहते हैं, बाईबिल और अन्तिम दिन, ये पांचों Religion के आधार हैं। इसी प्रकार से अल्लाह और उसके रसूल मुहम्मद और उनके द्वारा प्रकट हुआ कुर्आन, आखिरी न्याय का दिन, जन्नत और जहन्नुम, इन पांचों में विश्वास मजहब का आधार है। आप लोग बाईबिल, कुर्आन और वैदिक विज्ञान पढ़िए तो आपको पता चलेगा कि इनमें अन्तर क्या है? जब मैं मानव समाज में यह घोषित करता हूँ कि इस वैज्ञानिक युग में वही धर्म, वही जीवन प्रणाली, वही सभ्यता और संस्कृति जीवित रहेगी जो विज्ञान सम्मत होगी, जो विवेक सम्मत होगी और विशुद्ध बुद्धि के प्रकाश में प्रतिष्ठित होगी तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं है। याद रखो विश्व में एक वैदिक विज्ञान ही ऐसा जीवन विधान प्रस्तुत करता है जो युगों से मानव समाज का मार्ग दर्शन करता आ रहा है। वह पूर्ण विज्ञान पर प्रतिष्ठत है जहाँ पर अन्धविश्वास के लिए कोई स्थान नहीं है।

दुर्भाग्य से कुछ शताब्दियों से उस जीवन विधान में भी अन्धविश्वास की कुछ बातें जोड़ दी गई हैं। उस जोड़ने का कारण रहा है ज्ञान की वाहिका संस्कृत भाषा की उपेक्षा वा उसका ज्ञान न होना। जैसे मैंने आप लोगों को प्रारम्भ में ही बताया है कि हमारा बहुत बड़ा समाज शिक्षा से वंचित कर दिया गया, ज्ञान–विज्ञान के मूल स्रोत वैदिक साहित्य के अध्ययन से वंचित कर दिया गया तथा ज्ञान विज्ञान की वाहिका संस्कृत भाषा से वंचित कर दिया गया जिसका दुष्परिणाम हुआ हमारा यह पतन। याद रखो कि जैसे पृथ्वी पर गिरा हुआ व्यक्ति पृथ्वी का सहारा लेकर ही खड़ा होता है और उसके खड़े होने के लिए दूसरा अवलम्बन नहीं होता। इसी रूप से जिन कारणों से हमारा पतन हुआ है उन कारणों को ढूंढ करके हमें उनका निराकरण करना होगा। जिन कारणों से हम विश्व के मंच पर प्रतिष्ठित हुए हैं, विश्व के लिए आदर्श रहे हैं, उन कारणों को पुनः हमें अपनाना पड़ेगा। वही संस्कृत भाषा जो दिव्य भावों को; दिव्य संस्कारों की; दिव्य ज्ञान–विज्ञान की; दिव्य जीवन प्रणाली की; दिव्य धर्म की; दिव्य संस्कृति और सभ्यता की वाहिका है, उसके त्याग से, उससे विमुख होकर हम इस दुर्गति को प्राप्त हुए हैं। जब तक हम उसका अवलम्बन नहीं लेते तब तक पुनः हम अपने उच्चतम आदर्श को प्रतिष्ठित नहीं कर पायेंगे।भाषा कोई बुरी नहीं होती। मैं भी इंग्लिश का अध्ययन किये हूँ और इंग्लिश भाषा के माध्यम से ही अपनी संस्कृति, सभ्यता और संस्कारों को विदेशों में प्रकाशित और प्रचारित कर रहा हूँ। ऐसी बात नहीं कि मैं उसको घृणा की दृष्टि से देखता हूँ।

यह मेरा सिद्धांत है और मैं अपने साथियों को बताया करता हूँ कि यदि तुम्हारा हाथ मजबूत रहेगा तो हाथ में पकड़ा हुआ हथियार बहुत बड़ा काम देगा। यदि हाथ ही कमज़ोर हो गया तो हाथ में पकड़े हुए हथियार की कोई उपयोगिता नहीं होगी। तुम्हारी मातृ भाषा; तुम्हारी आदिभाषा; तुम्हारी सभ्यता, संस्कृति और धर्म की संवाहिका भाषा संस्कृत तुम्हारा हाथ होना चाहिए और विदेशी जितनी भाषाएँ हैं, वे सब तुम्हारे लिए हथियार का

काम करें। हथियार को हाथ का स्थान देने की भूल मत करो। भारतवासियो! यदि हथियार को हाथ का स्थान दे दिया तो तुम्हारा हाथ कमज़ोर हो जायेगा और निर्बल हाथ वाला व्यक्ति कभी हथियार का सही प्रयोग नहीं कर पायेगा और सदैव पराजित होगा।

आप लोगों से मैं निवेदन कर रहा था जिस ज्ञान विज्ञान के प्रकाश में हमारी संस्कृति, सभ्यता; हमारा जीवन विधान विश्व के लिए आदर्श रहा है, हमें उसकी तरफ देखना होगा। एक बात और कह दूं बुरा न लगे तो! यदि बुरा भी लगे तो हमारी कोई हानि नहीं है। वर्तमान के जो नवयुवक हैं उनके आदर्श हमारे अभिनेता हैं। जो 40 वर्ष के ऊपर हो जाते हैं उनके आदर्श हमारे वर्तमान के नेता हैं। अभिनेता निम्नतम स्तर के मनोरंजन के द्वारा और नेता अबोध जनता को प्रलोभन दिखाकर दोनों हाथों से ही नहीं बल्कि अनेक हाथों से उन्हें लूटने में लगे हैं। इस देश की भलाई का बोध न तो नेता को है और न अभिनेता को इसलिए यह जिम्मेदारी आप शिक्षकों को ही वहन करनी पड़ेगी। इसके लिए आपको ही तैयार होना पड़ेगा। यह आप भूल जायें कि आपके नेता आपकी सभ्यता और संस्कृति को विश्व में प्रकाशित करेंगे। हमारे देश से एक वर्ष बाद चीन आज़ाद हुआ। चीन ने किसी देश से भीख नहीं मांगी, अपनी अस्मिता को गिरवी नहीं रखा, अपने स्वाभिमान को दूसरे के हाथ नहीं बेचा। क्या भारतवासी विश्वास के साथ कह सकते हैं कि इस विश्व के दीन से दीन, तुच्छ से तुच्छ देश के सामने हमने हाथ न फैलाया हो? विश्व के सामने अपनी अस्मिता को जितनी अधोगति को पहुँचाने वाले हमारे नेता हैं, उतना शायद कोई अन्य होगा और हम विकास के नाम पर सन्तुष्ट होते रहे।

आप ज़रा सोचिये हमारी इस अधोगति में किन-किन का हाथ है? आपने कभी विचार किया? इसमें कोई सन्देह नहीं कि हम जिनकी सन्तान हैं उसमें पहले तो हमारे पूर्वज हेतु रहे हैं। हम उसे स्वीकार करते हैं क्योंकि ज्ञान-विज्ञान की वाहिका संस्कृत भाषा को सीमित करने का दुष्कर्म हमारे पूर्वजों ने किया है। हम भी उसी वंश में पैदा हुए हैं इसलिए हम इसे स्वीकार करते हैं। जहाँ पर विश्व के लोग अपनी सभ्यता औऱ संस्कृति को विस्तार करने के लिए अपना सर्वस्व समर्पित करने को तत्पर हैं वहाँ पर वैदिक निर्देशों की अवहेलना करते हुए हमने अपने विचारों को, अपनी सभ्यता, संस्कृति और धर्म को विश्व में फैलाने का प्रयत्न नहीं किया बल्कि उसको सिकोड़ने का प्रयत्न किया है। क्या ऋग्वेद के उस मन्त्र को हमने ध्यान से समझने का प्रयत्न किया है जिसमें यह आदेश है–

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम।
अपघन्तो अराव्णः (ऋग्वेद 163/5)

तत्त्वद्रष्टा ऋषि कहता है कि तुम अपने में योग्यता, सामर्थ्य और ऐश्वर्य की वृद्धि करो और सारे विश्व को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ वा उन्नत बनाओ तथा अदानी, स्वार्थी, मानवता विरुद्ध आचरण करने वाले आतताइयों को समाप्त कर दो। क्या वेद के इस आदेश

पर विचार किया? नहीं, कभी नहीं किया? एक बार एक सज्जन मुझ से कहने लगे कि हमारे धर्म में विश्व को परिवर्तित करने के लिए व्यवस्था नहीं है। मैंने उससे कहा कि परिवर्तित करने को कौन कह रहा है आपसे? मैं तो आपको परिमार्जित करने के लिए कह रहा हूँ। विश्व के मनुष्यों के परिमार्जन को व्यवस्था आपके शास्त्र में है कि नहीं है? यदि नहीं है तो आप ऋग्वेद के उस मन्त्र को पढ़ लेना जिसमें कहा है – कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।

आपको तो वेद की आज्ञा है कि सारे विश्व को आर्य बनायें। आर्य बनाने का अर्थ है कि सारे विश्व के मनुष्यों के जीवन को परिमार्जित करें। आर्य बनाने का अर्थ यह नहीं होता जैसे पश्चिम वालों ने आर्य की व्याख्या की है। पश्चिम के एक समाज–शास्त्री से मेरी चर्चा हो रही थी। मैंने उनसे कहा कि हमें वैदिक साहित्य में कहीं भी ऐसा प्रमाण नहीं मिला जिससे हम यह स्वीकार करें कि आर्य नाम की कोई मनुष्यों की जाति है। आर्य हमारे यहाँ श्रेष्ठ को कहते हैं। अपने से बड़ों को हमारे यहां आर्य शब्द से सम्बोधित करते हैं। वाल्मीकि रामायण पढ़ें। जब रावण सीता को मारने के लिए उद्यत होता है तो मंदोदरी उसका हाथ पकड़ लेती है और कहती है कि आर्य पुरुष ऐसा नहीं करते जैसा तुम करने जा रहे हो। कहने का अभिप्राय कि आर्य कोई जाति नहीं है लेकिन पश्चिम वालों ने कहा कि आर्य मनुष्यों की एक जाति है जिनका नाक तीखा, रंग गोरा और शरीर लम्बा होता है। यदि उनके विधानानुसार आर्य जाति का निश्चय किया जाये तो राम और कृष्ण दोनों अनार्य घोषित किये जायेंगे क्योंकि दोनों गोरे नहीं काले थे, साँवले थे।

मैं आप लोगों से निवेदन कर रहा था कि वेद ने हमें निर्देश दिया है कि सारे विश्व के मनुष्यों के जीवन को परिमार्जित कर सुसंस्कृत बनाओ। उनके जीवन से दुर्गुण दूर करने का प्रयत्न करो। मनुष्य शरीर में आने पर इस जीवात्मा में कुछ पाश्विक संस्कार होते हैं और कुछ दैवी गुण। हम भारतीय पुनर्जन्म में आस्था रखते हैं। पुनर्जन्म वैज्ञानिक तथ्य घोषित हो चुका है, अब इसमें कोई सन्देह नहीं रहा। अमेरिका के कैलिफोर्नियां विश्वविद्यालय के विद्वानों ने Para psychology के नाम से इस पर अनुसंधान किया है। कई व्यक्तियों को वे एक प्रक्रिया विशेष से उसके पूर्वजन्म में ले गये। एक महिला को वे उसके पूर्व के पाँच जन्मों में ले गये। उसमें जो कुछ उसने बताया उसकी खोज की गई और वह सब सत्य पाया गया। पूर्व जन्म के संस्कारों को स्वीकार करने के नाते मैं कह सकता हूँ कि मनुष्य के अंदर जितनी योनियां हैं ये सब पाश्विक योनियां हैं वा तिर्यक योनिया हैं। उन योनियों से विकसित हुआ जो चित्त इस मनुष्य शरीर का कारण बना उसमें पूर्व के उन पाश्विक योनियों के संस्कार आये हैं इसलिए मनुष्य शरीर में जन्म लेने पर उसमें कुछ तो पाश्विक संस्कार होते हैं और चित्त में बोधात्मिका शक्ति बुद्धि का उदय होने से उसमें दैवी गुणों के बीज भी निहित हैं। यह याद रहे कि बुद्धि ही दैवी गुणों की जननी है। यही कारण है कि मनुष्य का शरीर पाश्विक संस्कारों और

दैवी गुणों का संगम होता है। शिक्षा का प्रयोजन यह है कि मनुष्य में जो पाश्विक योनियों के संस्कार आये हैं उनका परिमार्जन तथा दैवी गुणों का विकास करना है। शिक्षा का यही सही प्रयोजन है। शिक्षा का प्रयोजन यह नहीं कि बाहर से उसमें कुछ भरा जाए। यह वैदिक ऋषियों की दी हुई व्यवस्था है। 'कृण्वन्तो विश्वं आर्यं' का अभिप्राय ही यह है कि मनुष्य के जीवन से पाश्विक संस्कारों का निराकरण कर उसमें दैवी गुणों का प्रकाश किया जाए और इसका उतरदायित्व आप पर है क्योंकि विश्व के प्राचीनतम राष्ट्र आप हैं। विश्व की प्राचीनतम सभ्यता, संस्कृति और धर्म के उत्तराधिकारी आप हैं।

एक बार मैं इंग्लैण्ड के एक चर्च में वैदिक विज्ञान के प्रकाश में जीवन के विकास की व्यवस्था पर एक व्याख्यान दिया। मेरे व्याख्यान के पश्चात एक व्यक्ति ने कहा स्वामी जी! आपके विचार बहुत अच्छे हैं। ये पूर्व के लोगों के लिए तो उपयोगी हैं परन्तु हम पश्चिमी लोगों के लिए ये उपयोगी कैसे हो सकते हैं? मैंने उनसे कहा कि यदि पूर्व में उदय होने वाला सूर्य आप लोगों के लिए उपयोगी हो सकता है तो पूर्व से उदय हुआ ज्ञान–विज्ञान आपके लिए अहितकर कैसे हो सकता है? मेरे कहने का अभिप्राय विश्व को ज्ञान–विज्ञान की सीख पूर्व ने दी है इसलिए यह दायित्व आपको ही निभाना है।

हमारे ऋषियों ने विश्वबन्धुत्व की उद्भावना की थी। विश्व को एक कुटुम्ब के रूप में माना था।

उदारचरितानं तु वसुधैवकुटुम्बकम्। (महोपनिष्द 6/71)

कह करके उन्होंने उद्घोष किया था। पश्चिम के विज्ञान ने अब दुनिया को यातायात की सुविधा देकर इतना छोटा बना दिया है कि सही में आज विश्व एक परिवार हो गया है। एक व्यक्ति चाहे तो पूरे विश्व की परिक्रमा करके 24 घन्टे में वापिस आ सकता है। विश्व इतना छोटा हो गया है कि विश्व कुटुम्ब की भावना साकार हो गई है किन्तु दुर्भाग्य यह है कि शरीर से जितना हम नज़दीक आते गए हृदय से हम उतना दूर होते गये। आज बड़े-बड़े शहरों में देखिये ऊपर कौन रहता है पता नहीं, उससे ऊपर कौन रहता है पता नहीं और पड़ौस में कौन रहता है इसका भी कुछ पता नहीं। बाहर की सीमायें टूटती गई और अन्दर की सीमायें बढ़ती गईं। कारण क्या है जानते हो? कारण यह कि पश्चिमी विज्ञान ने आपको बाहर के साधन तो उपलब्ध करवा दिये किन्तु दुर्भाग्य से पूर्व का अध्यात्म अपना दायित्व नहीं निभा सका। उसका परिणाम यह हुआ कि बाहर से हम फैलते चले गये और अन्दर से सिकुड़ते गये। यह मनुष्यता के लिए वरदान नहीं अभिशाप बन गया है।

मेरी राय है कि भौतिक विज्ञान को प्रकाश प्रदान करने वाली यदि भारत की आध्यात्मिक विचारधारा उसे अनुप्राणित नहीं करती तो वह जड़ का जड़ रह जाएगा।

वह मनुष्यता को विकास नहीं विकास के नाम पर विनाश के कागार में पहुँचा देगा। मैं पश्चिम के लोगों में यह बताता हूँ कि भारतीय संस्कारों ने विश्व को ऋषि दिया और तुम्हारे संस्कारों ने विश्व को हिप्पी दिया। बाहर से देखने पर तो ऐसा लगेगा कि हिप्पी और भारत के साधु एक से होते हैं किन्तु दोनों में कितना अन्तर है। एक जीवन की पराकाष्ठा की पूर्णता तक पहुँचा हुआ है और दूसरा अधोगति के गर्त में गिरा हुआ है। एक दैवी प्रकाश में अपने आपको विश्व के साथ आत्मसात करता हुआ आनन्द का उपभोग कर रहा है तो दूसरा पाश्विक जीवन जीने में निमग्न है। इसलिए मैं आप लोगों से निवेदन कर रहा था कि आप अपने दायित्व को सम्भालें। यहाँ पर संस्कृत के विद्वान् उपस्थित हैं उनसे मैं निवेदन करूंगा कि जो भूल हमारे पूर्वजों ने की है, उस भूल को न तो हम पकड़े रहें और न उसे दोहराने का ही प्रयत्न करें। हमें अपनी भाषा, अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता, अपने धर्म को विश्व में प्रकाशित करना है और जन-मानस तक पहुँचाने का व्रत लेना है। यह ठीक है कि वर्तमान में उसी भाषा की महत्ता है जो भोजन देने में सक्षम हो। इंग्लिश लोग इसलिए पढ़ते हैं कि वह नौकरी का माध्यम बनी है और संस्कृत इसलिए नहीं पढ़ते कि वह केवल पुरोहितों की भाषा बन कर रह गई है। संस्कृत सही में ज्ञान-विज्ञान की भाषा है। वह पुरोहितों की ही भाषा नहीं है पुरोहितों की भी भाषा है। वाह! कितना गौरवशाली शब्द है पुरोहित। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के प्रथम सूक्त के प्रथम मन्त्र का प्रथम चरण आप पढ़िये –

अग्निमीढ़े पुरोहितम्।

'पुरोहित' शब्द जो इतना गौरवशाली था आज वह इतना निन्दनीय क्यों हो गया? इसको इस दुर्गति में पहुंचाने का उत्तरदायित्व किस पर है, इसके लिए उत्तरदायी कौन है? मुझे कहने में कोई संकोच नहीं कि इसके उत्तरदायी हम हैं। इसको इस अवस्था में पहुंचाने का श्रेय हमें है। जिसके द्वारा विश्व में मानवता का प्रकाश हुआ, जिसके द्वारा विश्व की श्रेष्ठतम सभ्यता और संस्कृति का प्रकाश हुआ; जिसके द्वारा विश्व ने जीवन जीने की कला सीखी, उस महत्वपूर्ण भाषा को सीमा में आबद्ध करने का यह अहितकारी कार्य हमने किया है। आज मैं विद्वानों से निवेदन करूंगा कि अपनी की हुई भूल को दुहराने का प्रयत्न न करें। प्रयत्न करें इस भाषा को विश्व के स्तर पर पहुंचाने का। भाषा भाव की वाहिका है।

एक बार कुछ महात्मा विद्वान् साथ बैठे हुए किसी विषय पर चर्चा कर रहे थे। मेरे से उन्होंने कहा कि स्वामी जी आप अपने विचारों में थोड़ा सा परिवर्तन कर दो। मैंने उनसे कहा कि देखिए आप मेरे मित्र हैं, हितैषी हैं। यदि आप कहें के बावरा जी! आपकी दाढ़ी मुझे अच्छी नहीं लग रही है तो मैं अभी कटा देता हूँ परन्तु यदि आप कहें कि बावराजी आपकी नाक मुझे अच्छी नहीं लग रही तो उसको कटाने के लिए मैं तैयार नहीं हूं। जीवन के कुछ ऐसे मूल्य होते हैं जिनको परिवर्तित करने से सारा जीवन परिवर्तित हो जाता है और जीवन में कुछ ऐसी मान्यतायें होती हैं जिनके त्यागने से

उसकी प्रतिष्ठा में कोई अन्तर नहीं पड़ता। जिन मूल्यों के आधार पर हमारी सभ्यता, संस्कृति और धर्म प्रतिष्ठित हैं, हमारी अद्वितीय, अनुपम जीवन प्रणाली प्रतिष्ठित है, उन मूल्यों के साथ समझौता करने के लिए हम तैयार नहीं हैं लेकिन जो हमारे में आए हुए आगन्तुक दोष हैं, उन दोषों का निवारण करने के लिए हम सतत तैयार हैं। उसके लिए हमें सजगता के साथ विवेक के प्रकाश में परिमार्जन, संशोधन करने में कोई आपत्ति नहीं है। मैं आप लोगों से निवेदन कर रहा था कि हमारा धर्म मृत धर्म नहीं है; हमारी संस्कृति मृत संस्कृति नहीं है; हमारी भाषा मृत भाषा नहीं है और हमारी सभ्यता मृत सभ्यता नहीं है। कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि सनातन धर्म में जो कुछ भी है वह सभी कुछ अपरिवर्तनीय है किन्तु मेरी मान्यता ऐसी नहीं है। मैं ऐसा मानता हूँ कि शरीर के जितने अंग हैं सभी परिवर्तनशील हैं और इसमें परिवर्तशील है केवल आत्मा इसलिए आत्मा की सुरक्षा रखते हुए बाहर के शरीर के जितने अवयव हैं उनके परिवर्तन में हमें कोई आपत्ति नहीं क्योंकि वे स्वभावतः परिवर्तनशील हैं। किन्तु यदि कोई कहे कि शरीरगत आत्मा को ही परिवर्तित कर दो फिर तो शरीर का अस्तित्व ही नहीं रहेगा, इसकी उपयोगिता ही क्या रहेगी? इसलिए मैं आप लोगों से निवेदन कर रहा था कि हमें अपने मूल तत्त्वों को सुरक्षित रखते हुए आये हुए समस्त दोषों का परिमार्जन करना है और उसके साथ ही मानव समाज के समक्ष एक ऐसा आदर्श प्रस्तुत करना है जो विश्व मानव को अलोक प्रदान कर सके।

आज सही में मानवता चौराहे पर खड़ी हुई है। विश्व देख रहा था कि शायद साम्यवादी विचारधारा हमें कोई राहत देगी किन्तु वह अपने जन्म के साथ ही मर गई। पूंजीवाद तथा व्यक्तिवाद जो पश्चिम से उदय हुआ है भौतिक विज्ञानवाद के प्रकाश में वह वहाँ के लोगों को ही शान्ति देने में सक्षम नहीं रहा तो आपको शान्ति कहाँ से देगा? विश्व की दृष्टि अब केवल एक वाद पर टिकी हुई है जिसे कहते हैं अध्यात्मवाद। वह अध्यात्मवाद आपकी खोज है; वह अध्यात्मवाद मानव समाज को आपकी देन है और उसी पर आपके जीवन की सारी व्यवस्था प्रतिष्ठित है। यदि आप अध्यात्मवाद का वह दिव्य प्रकाश लेकर विश्व के सामने प्रकाशित करने के लिए तत्पर हो जाएं तो इसमें संदेह नहीं कि आप पुनः अपने जगत् गुरूत्व के पद को प्राप्त कर लेंगे। विश्व आपका अनुकरण करते हुए राहत की सांस लेगा। यदि आपने इस दायित्व को पूर्ण न किया तो याद रखिए आने वाली जनता, आने वाली सन्तानें कभी भी आपका न तो आदर करेंगी और आपके इस अपराध के लिए न तो आपको कभी क्षमा करेंगी। मैं पुनः विद्वत समाज के समक्ष बार-बार यह निवेदन करता हूँ कि आप अपनी सभ्यता, संस्कृति और धर्म को विश्व के सामने प्रकाशित करने का प्रयत्न करें। उसके लिए मैं सरकार में जो बैठे हुए लोग हैं उनसे भी निवेदन करूंगा कि यह न समझें कि संस्कृत एक मृत भाषा है। यथार्थतया संस्कृत एक जीवित भाषा है, वह कभी मर नहीं सकती। वह देव वाणी है, उसके मरने का तो प्रश्न ही पैदा नहीं होता किन्तु यदि कोई अपनी तुच्छ बुद्धि के

द्वारा उसकी यथार्थता और महत्ता को नहीं समझ पा रहा है तो इसमें उस भाषा का दोष नहीं है, दोष उस व्यक्ति का है। आप लोग उस दैवी भाषा के प्रकाश में जीवन विकास की व्यवस्था को विश्व के सामने प्रस्तुत करने का प्रयत्न करें, इसी निवेदन के साथ जो यहाँ विद्वत समाज उपस्थित है उनके प्रति तथा आप सभी के प्रति अपनी अनन्त मंगल कामनाएं व्यक्त करता हुआ मैं अपनी वाणी को विराम देता हूँ। दैवी विधान से फिर कभी मिलेंगे फिर आप से चर्चा करेंगे।

हरि ॐ तत्सत्